Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 GISRRJ | Volume 1 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

आचार्य मम्मट : व्यंजना व्यापार की अपरिहार्यता

डॉ0 राजेश सरकार
एसोसियेट प्रोफेसर
संस्कृत विभाग
कला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

ध्वनि के आधारभूत व्यंग्य अर्थ की सिद्धि व्यंजना शक्ति पर निर्भर है। अतः व्यंजना शक्ति की स्वतन्त्र रूप से मान्यता का प्रतिष्ठापन ''वाग्देवतावतार' आचार्य मम्मट का विशेष अध्यवसाय रहा है। मम्मट के अनुसार व्यंजना शब्द–शक्ति ही है, फिर भी जिस काव्य में शब्द–प्रमाण से संवेद्य कोई अर्थ पुनः किसी अर्थ को व्यंजित करता हैं, वही अर्थ व्यंजक हो जाता है और शब्द सहायक मात्र रहता हैं।[1] इसी को और स्पष्ट करते हुए काव्यप्रकाश के तृतीय उल्लास में ''नहि प्रमाणान्तरवेद्योऽर्थो व्यजकः''[2] से मम्मट का आशय यह है कि प्रमाणान्तर से अप्राप्त, किन्तु शब्द–प्रमाण से प्राप्त उस अर्थ के प्रति किया गया व्यापार व्यंजना हैं, जो शब्द की अभिधा लक्षणा एवं तात्पर्यवृत्ति से उपलब्ध न हुआ हो। यह व्यंङ्य अर्थ अर्थात व्यंजना व्यापार भारतीय काव्यशास्त्र की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि
एवं कसौटी है।

ध्वनि शब्द वस्तुतः व्याकरण शास्त्र के विद्वानों की देन है। प्राचीन वैयाकरणों में स्फोट रूप व्यंङ्य के व्यंजन में समर्थ शब्द को ''ध्वनि'' की संज्ञा प्रदान की। काव्यप्रकाश के पंचम उल्लास में व्यंजना व्यापार की स्थापना के प्रसंग में मम्मट ने व्यंजना व्यापार के लिये लोचनकार के अनुकरण पर ध्वनन व्यापार का भी प्रयोग किया है।[3] मम्मट ने ध्वनि काव्य का लक्षण करते हुए कहा है – वाच्य से व्यंग्य के अतिशय (प्रधान) होने के कारण ध्वनि उत्तम काव्य है।[4] मम्मट ने आनदवर्धन के आधार पर ही ''ध्वनि'' को उत्तम काव्य कहा है। आनन्दवर्धन ने ध्वन्यालोक में जो ''ध्वनि'' का लक्षण प्रस्तुत किया है वहाँ भी इसी अभिप्राय से ''ध्वनि'' का काव्य रूप अर्थ में प्रयोग किया है।[5] इस प्रकार ''ध्वनि'' की प्रतिष्ठा तो हुई किन्तु उसका विरोध भी कम नहीं हुआ। मम्मट ने अपने महनीय ग्रन्थ काव्यप्रकाश में ध्वनि के विरोधियों का खण्डन करके उसको प्रतिष्ठित करने में भी विशेष योगदान किया। मम्मट ने वस्तुतः ध्वनि की जड़ को अपनी मेधा के बल पर सींच कर और भी सुदृढ़ किया, जिसके फलस्वरूप वह परवर्ती आचार्यो द्वारा मान्य हुआ। इस प्रकार ध्वनि–सिद्धान्त व्यंग्यार्थ और व्यंजना वृत्ति पर आधारित सिद्धान्त है। व्यंजना–व्यापार ध्वनि–सिद्धान्त का प्राणतत्व हैं। इसी की प्रतिष्ठा करना ध्वनिवादियों का प्रधान लक्ष्य रहा हैं, व्यंजना–व्यापार की प्रतिष्ठा करना मानो व्यंग्यार्थ की ही स्थापना करना है, क्योंकि
व्यंग्यार्थ और व्यंजना–व्यापार परस्पर सापेक्ष शब्द है।

ध्वनिकार आचार्य आनन्दवर्धन ने ध्वनि की प्रतिष्ठा का सैद्धान्तिक विवेचन प्रस्तुत किया है। आचार्य मम्मट ने ध्वनिकार आनन्दवर्धन का अनुसरण करते हुए व्यंजना की स्थापना कर ध्वनि को प्रतिष्ठित किया। यद्यपि व्यंजना की स्थापना ध्वनिकार स्वयं कर चुके थे किन्तु उनके टीकाकार अभिनवगुप्त ने स्थूणा निखनन न्याय से सभी विरोधियों मुख्यतः मीमांसकों को अपनी तर्कशक्ति से निरुत्तर कर दिया था। आचार्य मम्मट ने भी काव्यप्रकाश के पंचम उल्लास में ध्वनिकार और अभिनवगुप्त के मतों का अनुसरण करते हुए व्यंजना तथा ध्वनि विरोधी समस्त मतों का खण्डन कर उसकी महत्ता का प्रतिपादन किया और इस कठिन कार्य में वे पूर्ण सफल हुए। ध्वनि के समर्थकों में आनन्दवर्धन और अभिनवगुप्त तथा विरोधियों में मीमांसक प्रतिहारेन्दुराज मुकुलभट्ट और नैयायिक महिमभट्ट थे। मम्मट की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि है, प्रबल ध्वनि विरोधी नैयायि

महिमभट्ट के व्यंजना विरोधी तर्को का निर्मूलन।

ध्वनि जिसका मूल आधार प्रतीयमान या व्यङ्य अर्थ है इसके महत्व की प्रतिष्ठा के साथ सम्पूर्ण साहित्यशास्त्र के क्षेत्र में एक प्रकार की क्रान्ति उत्पन्न हुई, जिसके फलसवरूप एक नई व्यवस्था तथा नये चिन्तन का सूत्रपात हुआ। एक ओर व्यङ्य के आधार पर काव्य के भेद–प्रभेद होने लगे, दूसरे अभिधा तथा वृत्तियों का विचार जो मीमांसा, व्याकरण आदि शास्त्रों का विषय था, साहित्यशास्त्र में होने लगा। व्यङ्य अर्थ के अनेक भेदो की कल्पना होने लगी और व्यंजना को अभिधा आदि से गतार्थ न होने की बात शास्त्रीय ढंग से सिद्धान्त रूप में प्रतिष्ठित हुई।

काव्यप्रकाश के द्वितीय उल्लास में ही आचार्य मम्मट ने ''नाभिधा समयाभावात् हेत्वभावान्न लक्षणा''[6] 'आदि द्वारा अभिधा और लक्षणा में व्यंजना के गतार्थ होने के पक्ष को निर्मूल कर दिया और पंचम उल्लास में मीमांसक आदि की युक्तियों का खण्डन करके व्यंग्य अर्थ की स्वतन्त्रता सिद्ध करने का सफल प्रयास किया।

आचार्य मम्मट ने दार्शनिक दृष्टि से लक्षणा और व्यंजना का भेद सुस्पष्ट किया है। इस प्रसंग में यह प्रश्न उठता हैं कि प्रयोजन विशिष्ट लक्ष्य को लक्ष्य अर्थ मान लिया जाय तो ऐसी स्थिति में एक अतिरिक्त शक्ति व्यंजना को मानने की आवश्यकता नहीं होगी। इसका भी खण्डन आचार्य मम्मट ने दार्शनिक युक्ति द्वारा किया है कि किसी ज्ञान का विषय और फल भिन्न–भिन्न समय में उत्पन्न होते है, न कि एक ही समय में।[7] इस प्रकार जब लक्षणा से लक्ष्य अर्थ का बोध होगा तव प्रयोजन रूप फल का बोध नहीं होगा। अतः प्रयोजन विशिष्ट लक्ष्य अर्थ को लक्ष्यार्थ की कोटि में नहीं लाया जा सकता। अतएव व्यंजना ध्वनि का आधार हैं और वह किसी प्रकार अभिधा और लक्षणा वृत्तियों से गतार्थ नहीं।

मम्मट ने अर्थविवेचन के प्रसैं. में मीमांसकों के सिद्धान्त को प्रदर्शित करने के लिये ''तात्पर्याथोऽपि केषुचित''[8] का विशेष रूप से उल्लेख किया हैं। मीमांसक व्यंजना विरोधी है, मीमांसा शास्त्र में दो मत प्रसिद्ध है, मीमांसक कुमारिल भट्ट एवं प्रभाकर भट्ट ने क्रमशः अपने सिद्धान्तों को अभिहितान्वयवाद तथा अन्विताभिधानवाद के माध्यम से तात्पर्य के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए स्पष्ट रूप से प्रतिपादित करते हैं कि व्यंजना या ध्वनि जैसी कोई शक्ति नहीं है। आनन्दवर्धन, अभिनवगुप्त एवं मम्मट तात्पर्य का खण्डन करते हुए व्यंग्य रूप ध्वनि के अस्तित्व का प्रतिपादन कर व्यंग्यार्थ की प्रतीति के लिये इन दोनों सिद्धान्तों में व्य×जना की अपरिहार्यता स्वीकार करते है। मम्मट मीमांसकैकदेशी अन्विताभिधानवाद के अन्तर्वर्ती विभिन्न व्यंजना–विरोधी मतों का उपन्यास कर उनका खण्डन करते है।

लोचनकार ने दीर्घदीर्घतर अमिधाव्यापारवादी अन्विताभिधानवादी के खण्डन के प्रसंग में पदार्थ तथा वाक्यार्थ में निमित्तनैमित्तिकभाव[9] स्वीकार कर व्यंजना को अस्वीकार कर देने वाले मीमांसक को परास्त किया था। मम्मटानुसार यह युक्तियुक्त हैं कि नैमित्तिक के अनुसार निमित्त की कल्पना का सिद्धान्त तर्क संगत नहीं माना जा सकता। मम्मट ने इस मत को ''अविचारिताभिधानम्''[10] (बिना समझे बूझे) कहकर निरस्त कर दिया।

आचार्य मम्मट ने काव्यप्रकाश में ध्वनि की स्थापना के क्रम में मीमांसा दर्शन के कई तथ्यों को बार बार उठाया है। मीमांसा दर्शन के आचार्य भट्टलोल्लट के अनुसार एक अमिधा व्यापार ही सभी अर्थो का बोध कर सकता है, इसके लिये व्यंजना को अलग से मानने की कोई आवश्यकता नहीं है। ''यत्परः शब्दः स शब्दार्थः''[11] का अभिप्राय है शब्द जिस तात्पर्य से उच्चरित होता है वही शब्द का अर्थ होता है। ''निःशेषच्युतचन्दनं''[12] में विधिरूप अर्थ के तात्पर्य से शब्द का उच्चारण हुआ है तो वही उसका अर्थ होगा। इस प्रकार अभिधा ही उसके बोध के लिये पर्याप्त है व्यंजना की आवश्यकता नहीं है। आचार्य मम्मट ने ऐसे लोगो को ''देवानां प्रियाः''[13] अर्थात मूर्ख कहा है तथा उन्हीं की युक्तियों से उनका खण्डन किया है। उनका कथन हैं कि ''तात्पर्यवाचोयुक्ति''[14] का अर्थ उन्होने भलीभाँति नहीं समझा। व्यंजना व्यापार की इसी श्रृंखला में ''विषं भक्षय मा चास्य गृहे भुङ्क्था''[15] अर्थात विष भले ही खा लेना पर

इसके घर भोजन मत करना। उक्त वाक्य में आया हुआ ''च'' शब्द दोनो की एकवाक्यता का सूचक है। एकवाक्यता होने के कारण शत्रु के गृह में भोजन करना विष भक्षण से भी बुरा होता है अतः इसके घर में मत जाओ, यह उपान्त शब्द के अर्थ में ही होता है, अनुपात्त शब्द के अर्थ में नहीं। मम्मट के तर्क का अभिप्राय ''यत्परः शब्दः स शब्दार्थः''[16] से उचित ही है। इस प्रकार

उपान्त (प्राप्त) शब्द के अर्थ में ही तात्पर्य है।

व्यंजना की अपरिहार्यता के सन्दर्भ में मम्मट अभिधा को दीर्घदीर्घतरव्यापार मानने वाले का प्रकारान्तर से खण्डन करते हुए कहते है कि यदि शब्द को सुनने के बाद जितना भी अर्थ प्रतीत होता हैं वह सभी अभिधा–गम्य ही माना जाय तो ''ब्राह्मण पुत्रस्ते जातः'' तथा ''ब्राह्मण कन्या ते गर्भिणी''[17] इन वाक्यों के सुनने के बाद क्रमशः हर्ष तथा शोक की प्रतीति होती हैं उसे भी अभिधेय रूप ही मानना पड़ेगा। क्योंकि मीमांसक का सारा कार्य अभिधा से ही समाप्त हो जाता है। वास्तविकता तो यही है। कि अभिधा वाक्य के अर्थ को बताकर विरमित हो जाती है। उसके बाद लक्षणा व्यंजना ही आगे का कार्य सम्पादित करती है। मीमांसा दर्शन में श्रुति–लिंर्ङ–वाक्य प्रकरण–स्थान–समाख्या ये सभी प्रमाण क्रमशः बलवान होते है अर्थात एक की अपेक्षा दूसरे की बलवत्ता क्रमशः होती है[18] इस सन्दर्भ में मम्मट का आशय यह है कि मीमांसक लोग स्वयं अपने शास्त्र को नहीं समझते है। अतः व्यंजना की अपरिहार्यता माननी ही पड़ेगी। इस प्रकार मम्मट ने मीमांसक को मीमांसा के शस्त्र से ही प्रहार कर पराजित किया है। तात्पर्य का ऐसा मीमांसा सम्मत विवेचन उनके किसी भी आलंकारिक

ने नहीं किया। अब अलंकारशास्त्र के अनुकूल व्यंजना की अपरिहार्यता सिद्ध करते है।

यदि वाच्यार्थ से भिन्न व्यंग्यार्थ न माना जाय तो 'रूचिं कुरु'[19] आदि वाक्यों में अश्लील अर्थ की प्रतीति से जो अश्लीलता दोष माना जाता हैं वह नहीं होगा। नित्य दोष और अनित्य दोष की व्यवस्था नहीं होगी और ''कपाली'' तथा '''पिनाकी'[20] शब्दों के वाच्यार्थ की समानता होते हुए भी विशेष स्थल पर विशेष शब्द के प्रयोग से जो चमत्कार आ जाता है उसका उपपादन नहीं हो सकेगा।

वाच्यार्थ और व्यंग्यार्थ की प्रतीति में संख्या, स्वरूप, काल, आश्रय, निमित्त, व्यपदेश, कार्य, विषय आदि का भेद होने से भी व्यंग्यार्थ को वाच्यार्थ से भिन्न मानना आवश्यक है।[21] व्यंग्यार्थ लक्षणागम्य भी नहीं हो सकती हैं। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन मम्मट ने ध्वनिकार की सरणि पर किया है। आशय यह हैं कि लक्षणा में प्रयोजन के ज्ञान के लिये व्यंजना की सहायता अनिवार्य हो जाती हैं। इस प्रकार लक्षणा अभिधानुगत होकर चलने वाली वृत्ति है जबकि व्यंजना स्वतन्त्र है।

अतएव व्यंजना, अभिधा तात्पर्य एवं लक्षणा इन तीनों व्यापारो से अतिरिक्त सिद्ध होती हैं मम्मट ने व्यंजना को अनिवार्य रूप से स्थापित करने के लिये सभी शास्त्रों की आलोचना की है। इसप्रकार वेदान्तवादी और वैयाकरण अखण्डार्थवाद को मानते है। ''सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म, ''एकमेवाद्वितीयं ब्रह्मं, ''अहं ब्रहमास्मि''[22] इत्यादि वेदान्त वाक्य अखण्ड रूप में ही अखण्ड ब्रह्म के वाचक होते है। मम्मट ने वेदान्तियों के विचार का खण्डन कर अपने ग्रन्थ में अविद्यापदपतितैः''[23] पद का प्रयोग किया है मम्मट के अनुसार अखण्डार्थवादियो को भी व्यंजना माननी ही होगी।

''काव्यप्रदीप''[24](गोविन्दठक्कुर रचित काव्यप्रकाश की व्याख्या) पर प्रभा के रचयिता ने ''अखण्डार्थवाद'' को वैयाकरण का मत निर्दिष्ट दिया है। वैयाकरण भी इसका उत्तर मम्मट के 'अविद्यापदपतितैः'' इस शब्द से करते है। 'निःशेषच्युतचन्दनं'[25] इस उदाहरण में विधि रूप अर्थ के बोध के लिये व्यंजना की अपरिहार्यता स्वीकार करनी ही होगी।

इस प्रकार मम्मट ने एक ही युक्ति से अखण्डार्थवादी अद्वैतवदोन्ती और वैयाकरण दोनो के मतों को निरस्त करके व्यंजना की स्थापना की है।

मुकुलभट्ट की गणना भी ध्वनिविरोधी आचार्यो में होती है। मुकुलभट्ट एकमात्र अभिधा व्यापार को ही अन्तिम अर्थ तक सक्रिय मानने के पक्षधर है। मुकुलभट्ट की ''अभिधावृत्तिमातृका'' मम्मट कृत शब्दशक्ति विवेचन की आधार भूमि है। उन्होने अपने ग्रन्थ में ध्वनिसिद्धान्त का खण्डन कर व्यंजना का अन्तर्भाव लक्षणा के अन्तर्गत किया है।

आचार्य मम्मट मीमांसक, वेदान्ती, वैयाकरणों के मत का खण्डन कर ध्वनि–सिद्धान्त के ''प्रबल विरोधी नैयायिक'' महिमभट्ट के ध्वनि सिद्धान्त का खण्डन करते हैं।

ध्वनि–सिद्धान्त के प्रबल विरोधी के रूप में नैयायिक महिमभट्ट का मूलोद्देश्य ध्वनि सिद्धान्त (व्यंजना) का उन्मूलन करना था। महिमभट्ट कृत संकल्प होकर इस कार्य में प्रवृत्त हुए थे। नैयायिक महिमभट्ट ने व्यंजना का विरोध कर अनुमान में उसका अन्तर्भाव सिद्ध किया है। अर्थात् व्यंग्य–व्यंजक भाव को अनुमानरूप सिद्ध करने के लिये व्याप्ति और पक्षधर्मता का सहारा लिया है। महिमभट्ट के मतानुसार आनदवर्धन ने जिस सिद्धान्त की स्थापना की है वस्तुतः उसका कार्य अनुमान से ही चल जाता है। आचार्य मम्मट के ''भ्रम धार्मिक विश्वस्तः''[26] इस प्रसंग में महिमभट्ट ने अनुमान की प्रक्रिया के अवलम्बन द्वारा ''मत घूमो'' यह अर्थ प्राप्त हो जाता है। अतः व्यंजना की आवश्यकता नहीं है।

आचार्य मम्मट इस अनुमानवाद का खण्डन नैयायिकों की युक्ति का अवलम्बन करके ही करते हैं। महिम भट्ट के मत से दोनो ही अर्थो का बोध क्रमपूर्वक होने से धूम तथा अग्नि की भॉति साध्य–साधन भाव अर्न्तनिहित है। वाच्य धूम की भॉति साधन है और प्रतीयमान अर्थ अग्नि के समान साध्य। जिस (वाच्यार्थ) में निःशंक आने के लिये कहा गया है, वह (वाच्यार्थ) न आने के कथन का साधन या हेतु है। अभिप्राय यह है कि जिसे व्यंग्यार्थ कहा गया है वह व्यंजना का व्यापार नहीं है और उसका अनुमान वाच्यार्थ से ही हो जाता है। जिस प्रकार अग्नि का अनुमान करने के लिये धुएँ का होना हेतु है, उसी प्रकार सिंह के आने की सूचना देना यहाँ आने के निषेध का हेतु है।

आचार्य मम्मट ने महिम भट्ट के मत का खण्डन करते हुए स्पष्ट किया कि यहाँ हेतु न होकर हेत्वाभास है। हेत्वाभास के पाँच प्रकारों में यहाँ तीन हेत्वाभास विद्यमान है। – अनैकान्तिक, विरूद्ध तथा अप्रसिद्धत्व। सामान्य तौर पर यह देखा गया है कि भीरू व्यक्ति भी प्रभु अथवा गुरू के आदेश से प्रियानुराग के कारण या किसी अन्य कारण से भय के कारण के होने पर भी भयजनक स्थानों में भ्रमण करता है। अतः यह अनैकान्तिक हेत्वाभास हैं कतिपय ऐसे व्यक्ति भी है जो कुत्ते से तो डरते है पर वीर होने के कारण सिंह से भय नहीं करते है। अतः यहाँ विरूद्ध हेत्वाभास हुआ। कुत्ते से न डरने का कारण सम्बद्ध व्यक्ति की भीरूता न होकर कुत्ते की अपवित्रता भी हो सकती हैं।

गोदावरी के तट पर सिंह की विद्यमानता प्रत्यक्ष या अनुमान प्रमाण से निश्चित न होकर केवल वचन से सिद्ध है। यहाँ कुलटा नायिका के वचन को प्रामणिक मान लिया गया है, अतः उसके कथन को आप्तवाक्य नहीं माना जा सकता। फलतः कुँज में सिंह की अवस्थिति असिद्ध होने के कारण यहाँ हेतु असिद्ध हैं। अतः तीन–तीन हेत्वाभासों के कारण यहाँ साध्य की सिद्धि असम्भव हैं। इसलिये भ्रमण–निषेध रूप व्यंग्यार्थ को अनुमान का विषय मानना हठघर्मिता है। ''निःशेषचयुतचन्दनं'' में महिमभट्ट ने चन्दन के छूट जाने आदि को अनुमापक रूप दिया हैं, वे अन्य कारणों से भी हो सकते है। यह भी अनैकान्तिक हेत्वाभास है। अतः अनुमान प्रणाली से व्यंग्यार्थ–प्रतीति सिद्ध नहीं की जा सकती। वास्तविकता तो यह है कि व्यंग्य वस्तु या तथ्य अनुमीयमान न होकर प्रतीयमान ही होता है। वह एक प्रकार का मानस बोध हैं अतः उसे अनुमानाश्रित नहीं कहा जा सकता है।

इस प्रकार आचार्य मम्मट ने अनुमानवादी महिमभट्ट के सारे तर्को को ध्वस्त कर उन्हें वितण्डावाद की संज्ञा दी और यह सिद्ध कर दिया कि ये तर्क या हेतु न होकर हेत्वाभास हैं। तर्क नहीं कुतर्क है, जिनमें पूर्वाग्रहग्रस्त विचारों की हठधार्मिता प्रकट हुई हैं। इस प्रकार शब्द की इस महनीय शक्ति को प्रतिष्ठा देने के लिये आचार्य मम्मट ने मीमांसक, वैयाकरण, नैयायिक एवं अखण्डार्थवादी अद्वैतवेदान्ती की शास्त्रीय युक्तियों का निराकरण करके व्यंजनावाद को स्थापित ही नहीं दृढ़मूल भी करने का प्रयास किया है। इस सन्दर्भ में यह कहना समीचीन हैं कि आचार्य मम्मट ने भारतीय काव्यशास्त्र को काव्यदर्शन का रूप प्रदान कर उसके विवेचन क्रम में महत्वपूर्ण दार्शनिक चिन्तनधाराओं को भी पृष्ठभूमि के रूप में उपस्थित किया।

इस प्रकार व्यंजना की सिद्धि ध्वनिवादियों और व्यंजनावादियों का अति महनीय एवं श्लाघनीय पुरूषार्थ रहा है।

सन्दर्भ संकेत

1. शब्दप्रमाणवेद्योऽर्थो व्यन्क्त्त्यर्थान्तरं यतः
   अर्थस्य व्यञ्जकत्वे तच्छब्दस्य सहकारिता। काव्यप्रकाश, तृतीय उल्लास पृष्ठ संख्या – 89
2. काव्यप्रकाश– तृतीय उल्लास – पृष्ठ संख्या – 89
3. ''अभिधातात्पर्यलक्षणात्मकव्यापारत्रयातिवर्त्ती ध्वननादि पर्यायो व्यापारोऽनपह्मवनीय एव'' – काव्यप्रकाश पंचम उल्लास पृ0 252
4. इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ये वाच्याद् ध्वनिबुधैः कथितः। काव्यप्रकाश–प्रथम उल्लास – पृ0 28
5. यत्रार्थः शब्दों वा तमर्थमुपसर्जनीकृतस्वार्थौ व्यङ्क्तः काव्यविशेषः स घ्वनिरितिसूरिभिः
   कथितः ध्वन्यालोक, प्रथम उद्योत, पृ– 171
6. काव्यप्रकाश–द्वितीय उल्लास – पृष्ठसंख्या 70, 71
7. ''ज्ञानस्य विषयोह्यान्याः फलमन्यदुदाह्मतम्'' काव्यप्रकाश–द्वितीय उल्लास– पृ0 76
8. काव्यप्रकाश, द्वितीय उल्लास पृ – 35
9. ''नैमित्तिकानुसारेणनिमित्तानि कल्प्यन्ते'' – काव्यप्रकाश पंचम उल्लास पृ– 229
10. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास – पृ0 229
11. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास – पृ0 230
12. काव्यप्रकाश, प्रथम उल्लास – पृ0 – 30
13. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास – पृ0 230
14. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास – पृ0 230
15. प्रकाशप्रकाश, पंचम उल्लास – पृ0 235
16. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास – पृ0 230
17. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास –पृ0 237
18. श्रुति–लिंै–वाक्य प्रकरण–स्थान समाख्यानां समवाये पारदौर्बल्यम् अर्थविप्रकर्षात् मीमांसा दर्शन – 3–3–14
19. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास – पृ– 241
20. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास – पृ0 241
21. काव्यप्रकाश से उद्धृत पृष्ठ सं0 – 247
22. काव्यप्रकाश, पृष्ठसंख्या – 256 से उद्धृत
23. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास – 257
24. काव्यप्रकाश, वामानाचार्य झलकीकर, भण्डारकर संस्थान, पूना 1950 (''काव्यप्रदीप एवं प्रभा) गोविन्दठक्कुर, वैद्यनाथ, निर्णयसागर, सं0 बम्बई।
25. काव्यप्रकाश, प्रथम उल्लास – पृ0 30
26. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास – पृ0 259

27. ध्वानिप्रस्थान में आचार्य मम्मट का अवदान – डॉ जगदीश चन्द्र शास्त्री
28. ध्वनि सम्प्रदाय और उसके सिद्धान्त – डॉ0 भोलाशंकर व्यास
29. ध्वन्यालोक–अनुवादक–डॉ रामसागर त्रिपाठी, मोती लाल बनारसी दास बंगलो रोड, जवाहर नगर दिल्ली।
30. आचार्य विश्वेश्वर सिद्धान्त शिरोमणि ज्ञानमण्डल लिमिटेड वाराणसी शब्दव्यापारविचार (मुकुलभट्टकृत अभिधावृत्तिमातृका के साथ) पं निर्णसागर, बम्बई।